चरम मन्त्र व्याख्या

(ले० वैदेहीकान्तशरण)

मन्त्र

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं मम ॥

व्याख्या

सकृत् एव :-सकृत पद का तीन अर्थ होता हैं-१ सह (साथ) २ एकवार, ३ सर्वदा । एव पद का अर्थ अवधारण (निर्णय, निश्चय) होता है । पुनः क्रिया सङ्गत एव कार का

अत्यन्तायोग व्यवच्छेद, विशेषण सङ्गत एवकारका अयोग व्यवच्छेद तथा विशेष्य संगत एव कार का अन्ययोग व्यवच्छेद अर्थ होता हैं। आचार्यश्रीने 'सकृदित्येव कारेण तूपायनिरपेक्षता (श्री गौ भा. २।३७)' अर्थात् 'सकृत् एव' से उपाय की निरपेक्षता कहा है। मन्त्र का प्रतिपाद्य विषय का चरम प्रयोजन वा लक्ष्य "अभयत्व" है। भय शत्रु से ही होता है। अत: उसका निवारण होना ही अभयत्व की प्राप्ति है। इसलिये उपायचतुष्टय अथवा सप्तविध उपाय शास्त्रों में कहे गये है-

"भेदो दण्डः साम दानामित्युपाय चतुष्टयम् ॥अ.को.२।८।२०
"उपायाः साम दानं च भेदो दण्डस्तस्थैव च ॥
याज्ञ० स्मृ० १।३४६

"सामभेदस्तथा दानं दण्डश्च मनुजेश्वर।
उपेक्षा च तथा माया इन्द्रजालं च पार्थिव ॥
प्रयोगाः कथिता सप्त तन्मे निगदतः शृणु । माल० ॥

अतः इन उपायों की निरपेक्षता इस अयोग व्यवच्छेदक एवकार का अर्थ है। सकृत पद का सह (साथ) अर्थ मे "तवास्मीति च याचते" वाक्य खण्ड के साथ अन्वय होगा। इसी प्रकार 'एकवार' एवं 'सर्वदा' अर्थ तथा अवधारण अर्थ में भी उसी 'तवास्मीति च याचते' वाक्य खण्ड के साथ ही अन्वय होगा। एक वार अर्थ में उपाय (साधन) की अमोघता (अव्यर्थता सिद्ध है।

प्रपन्नायः—प्रपन्न कहते है शरणमें गिरने वा जाने वाले को। इसमें चतुर्थी विभक्ति इसके अभिप्रेत विषयत्व की ज्ञापिका है- "कर्मणायमभिप्रैति स सम्प्रदानम्-पा० १।४।३२"

"क्रियया यमभिप्रैति सोऽपि सम्प्रदानम् (वा०)। इसका अन्वय भी 'तवास्मीति च याचते' के साथ ही है। आचार्य चरण ने कहा है-"प्रपन्नायेति पदतस्तूपायस्थानमुच्यते (२।३८) "अर्थात् प्रपन्नाय पद से उपायस्थान कहा गया है। प्रथम उपयान्तर का निरास कर दिया गया और अब यहाँ प्रपत्ति (शरणागति) को हीं एक मात्र उपाय (साधन) मानने का निश्चय कर 'तवास्मि' की याचना है। यहाँ याचक की कांक्षा शरणागति ही सिद्ध है। यही प्रयोजन चतुर्थी से सिद्ध है।

तवः- युष्मद् पद की षष्ठी विभक्ति का रूप तव पद है। षष्ठी विभक्ति सम्बन्ध का बोध कराती है। यह सम्बन्ध १ स्वस्वामी भाव, २ जन्यजनक भाव, ३ अवयवावयवि और ४ स्थान्यादेश भेद से चार प्रकार का होता है। यहाँ युष्मद् से स्तुत्य श्रीराम इष्ट है। अतः उन्हीं के साथ इन सम्बन्धों के संकेतों का प्रतिपादन षष्ठी से है। आचार्य चरण कहते है—"उपात्यत्वं भगवतस्तवेति पदतस्तथा" अर्थात् तव पद से भगवान् श्री राम को ही उपाय रूप होरे का बोध है। इस प्रकार श्री राम से उक्त सम्बन्धों की स्थापना हीं उपाय कहा गया है

अस्मिः- 'अस' भुवि (अदा०)' के लट का रूप है। शाश्वत सत्य प्रकृति की नित्य व्यवस्था, नियम प्रवृत्ति, समानरूपता आदि लट् लकार के द्वारा बतलायी जाती हैं यहाँ इस अस्मि क्रिया पद का अन्वय तव पद के साथ है। अतः यहाँ अस्मि पद स्तोता की सत्ता तथा इसकास्तुत्य के साथ नित्य सम्बन्ध का द्योतन कर रहा है—"मैं तेरा हूँ।"

अर्थात् मेरा तेरा सम्बन्ध शाश्वत है और तेरे सम्बन्ध रूप ही मेरी शाश्वत सत्ता है। भू सत्तायाम्। 'तवास्मि' कहने का अर्थ अतीतानागत भिन्न केवल वर्तमानकालिकत्व नहीं अपितु उक्त शाश्वत सत्य अर्थात अतीत में तेरा हीं हूं, वर्तमान में भी तेरा हूं एवं भविष्य में भी तेरा हूं का बोधक है। आचार्य चरण कहते हैं-"अस्मीत्यनेन चोपाय स्वीकारः प्रतिपाद्यते "अर्थात् अस्मि पद से उक्त उपाय (भगवत्च शरणागति) के स्विकार का प्रतिपादन है। स्वीकार पद से भी इसके शाश्वत सम्बन्धत्व का ही ज्ञापन है।

इति= इति पद का अर्थ हेतु, प्रकरण प्रकाश इसप्रकार, समाप्ति, विवक्षा, नियम और स्वरूप होता है यहाँ यदि इस इति पद का अन्वय "अभयं सर्वभूतेषु' के साथ किया जाय तो इस इति पद का अर्थ हेतु (कारण) होगा। इसी प्रकार इसका प्रकाश, प्रकरण, नियम स्वरूप आदि अर्थ भी सङ्गत होगा। परन्तु आचार्य चरण कहते हैं— "समाप्त्यर्थेति शब्देन तू गायानन्यतोच्यते" अर्थात्- इति शब्द का समाप्ति अर्थ है और इस कारण से इससे अनन्यता (अन्याश्रयाणां त्यागो अनन्यता-ना. भ. सू. १०) कहा गया है यह साधन की सरलता का भी बोधक है।

चः— च पद का अन्वाचय, समाहार, इतरेतरयोग, समुच्चय, विनियोग, तुल्ययोगिता और कारण अर्थ होता है। परन्तु आचार्य चरण यहां कहते हैं-"चकारतोऽनुक्त समुच्चयार्थतो निगद्यते त्वन्य उपाय आत्मविद्" अर्थात् आत्मज्ञानी लोग च कार का अर्थ समुच्चय निरूपित करते हैं और यह उनक्त अर्थ को भी कहनेवाला है। कहा है-

"उदीरितोऽर्थः पशुनापि गृह्यते
हयाश्च नागाश्च वहन्ति चोदिताः ।
अनुक्तमप्यूहति पण्डितो जनः
परेङ्गितज्ञानफला हि बुद्धयः ॥"

अतः आचार्य चरण ने यहाँ अनुक्त अर्थ का भी आग्रह रक्खा है । साहित्य के सिद्धान्त में इस अनुक्त का नाम अनुक्त सिद्धि है-

"विशेषार्थोहविस्तारोऽनुक्तसिद्धिरुदीर्यते ॥
सा० द० ६।१९४॥"

विशेष के प्रयोजन के लिये तर्क के विस्तार को अनुक्त सिद्धि कहते हैं ।

यहाँ सामान्य रूप से 'तवास्मीति' कहा गया है । परन्तु तेरा क्या हूं ? सेवक हूं, सखा हूँ, पुत्र हूँ, मित्र हूं, शिष्य हूँ आदि नहीं खोला गया है । इस अनुक्त के विस्तार के लिये भी यह च पद है ।

याचते= 'टु याचृ याञ्चायाम् (भ्वा०)' का लट् रूप है । याञ्चा का अर्थ नम्रतापूर्वक किसी वस्तु को मागना होता है । याञ्चा महान पुरुष से ही की जाती है । मेघदुतम् में लिखा है-"याञ्चा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामाः ।"

निष्फल होने से भी महान् से मांगना श्रेष्ठ है किन्तु सफल होने पर भी अधम से मांगना नहीं । यहाँ अपने से श्रेष्ठ से मागा जा रहा है यह याचना प्रशस्त है

एवं इसकी प्रशस्तता सिद्ध है। आचार्य चरण ने कहा है- "उपाय संसेव्यऽधिकारिलक्षणं पदेन वै याचत इत्यनेन तु"। अर्थात्- जाचते पद से उपाय रूप शरणागति संसेव्य रूप भगवान् श्री राम एवं अधिकारी रूप शरणागति के कांक्षी-इन तीनों के लक्षणों का निरूपण है। वह लक्षण इस प्रकार है-जो भय से मुक्त करने का (अभयं सर्वभूतेभ्यो) एक मात्र उपाय (प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते) वह प्रपत्ति (शरणागति) है। जो अभय प्रदान करने के व्रती (अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम) हैं वही श्री राम संसेव्य हैं एवं जो उक्त प्रपत्ति (प्रपन्नाय) तवास्मीति च याचते) की याचना करने वाले भय त्रस्त हैं वे ही अधिकारी हैं। यहाँ याचते पद से इन तीनों के लक्षण का प्रतिपादन है।

अभयं:—भीति, भीः, त्रास, साध्वसम्, दरः आदि भय (डर) के नाम हैं। इसके अभाव का नाम अभय है। संसार में आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक रूप तीन प्रकार के भय हैं। ये बाधक वा प्रतिबन्धक हैं। आचार्य चरण कहते है-"अथाभयमिति प्राप्ति प्रतिबन्धक वारणम्" अर्थात् अभय की प्राप्ति का अर्थ हिंसक जीवादि बाह्य प्रतिबन्धक एवं काम क्रोध, लोभ, मोह, तृष्णा, मत्सर, अविवेकादि आन्तरिक प्रतिबन्धक-इन सभों का निवारण प्रतिपादित किया गया हैं। इस अभय में द्वितीया विभक्ति इसके ईप्सिततम कर्म होने का निरुपक है।

सर्वभूतेभ्यो:=भूत शब्द का अर्थ पञ्चमहाभूत (अचित्) एवं प्राणी (चित्) दोनों होता हैं। सर्वपद से इन सभी का

ग्रहण होता हैं । अथवा सर्वभूतेभ्यो का अर्थ सर्वउत्पन्नेभ्यो चिदचिद्भ्य होता हैं । आचार्यचरण कहते है–"सर्वभूतेभ्यः इत्येव प्राप्यस्य प्रतिबन्धकम्' अर्थात् सर्वभूतेभ्यः पद से प्राप्य (श्रीराम) के प्रतिबन्धक का वरणनिरूपित हैं । प्राप्य श्री राम का प्रतिबन्धक कोई नहीं है वह सर्वसमर्थ और 'अभयं सर्वभूतेभ्यः' प्रदान करने के व्रती है। इसमें पंचमी विभक्ति हेत्वर्थक है।

ददामि='ददामि' में लट् लकार इसके शाश्वत सत्य एवं नियम के निरूपण में है । आचार्यचरण कहते हैं– ददामीति पदेनाथोपायस्य सार्वशक्तिता "अर्थात् ददामि पदसे उपाय (प्रपत्ति) की सार्वशक्तिता का निरूपण है अथवा उपाय रूप भगवान् के सार्वशक्तिमत्व का प्रतिपादन है । भगवान् सार्वशक्तिमान् हैं अतः उनके ददामि पद में अर्थ वत्व एवं शक्ति है ।

एतद्:-एतद् शब्द का अर्थ 'यह' होता है । यदि किसी बहुत ही निकट वस्तु का बोध करना हो तो एतद् शब्द के रूपों का प्रयोग होता है–

"इदमस्तुसन्निकृष्टं समीपतरवर्ति चैतदो रूपम् ।
अदसस्तु विप्रकृष्ट तदिति परोक्षे विजानीयात् ॥

आचार्यचरण कहते है–"एतदित्येव पदतोऽसंशयत्वमितीर्यते" अर्थात्–एतद् पद से संशय के अभाव का निरूपण हैं । कोई वस्तु दूरदेशवर्ती एवं दूरकालवर्ती हो तो उसमें

(अनुसन्धान टाइटल नं. ३ उपर)

पान १२८ से चालु

संशय की संभावना होती है। भगवान् 'एतद्' पद का प्रयोग कर इसे समीपवर्ती बतला रहे हैं अतः इस एतद् पद के प्रयोग से संशय शून्यता का प्रतिपादन है।

व्रत -व्रत कहते हैं नियम को व्रत कहकर भगवान यह घोषित करते है कि यह कोई मेरा अभी का विचार या सामयिक अनुदान मात्र नहीं है अपितु यह मेरा व्रत=नियम अर्थात् कानून है। अतः इससे याचकों को अभयत्व प्राप्ति की दृढता (निश्चय) का निरूपण है। आचार्यचरण कहते है- व्रतमेतदूपदेनार्थो तद्दाढर्यमभिधीयते" अर्थात् व्रत पद से उस अभयत्व की निश्चितता का प्रतिपादन है।

ममः-मम का अर्थ है मेरा। यहाँ इस अस्मद् शब्दमें षष्ठी विभक्ति का प्रयोग कर इस व्रत का सम्बन्ध अपने से जोड़ते है और यह ज्ञापित करते है कि यह किसी दूसरे का नियम नहीं है अपितु खास मेरा (नियम) है एवं मेरा यही व्रत है। इससे श्रीराममें निर्भरत्व का अनुसन्धान करना प्रतिपादित है। ऐसा आचार्यचरण कहते हैं- "निर्भरत्वानुसन्धानं ममेति प्रतिपाद्यते।"

इस मन्त्रका तात्पर्यार्थ शरण्य (श्रीराम) की रुचि (प्रसन्नता-प्रियता का सम्यक् प्रकार से अवलम्बन करना है, वाक्यार्थ उस प्रापक (प्रपन्न) के याचक स्वरूप का निरूपण है, प्रधानार्थ परेश (परमेश्वर श्रीराम) के अभयप्रदानव्रती स्वरूप का निरूपण एवं अनुसन्ध्यर्थ प्रपन्न का परेश (श्री रामजी पर सर्वथा निर्भरत्व (आश्रयत्व) का अनुसन्धान करना है। ऐसा आचार्यवर्य जगद्गुरु श्रीरामानंदाचार्यजीने उपदेश दिया है।

॥ ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥